ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-2, No.-2, **PP-172-175**,YEAR-2015

संगीत की भूमिका – सामाजिक संदर्भ में

❑ **डॉ0 निष्ठा शर्मा**

सारांश– *प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तु के शब्दों में – ''मनुष्य एक सामाजिक प्राणी हैं''[1] मुनष्य का प्रारम्भ से लेकर आज तक इतिहास बताता है कि मनुष्य समूह या समाज में रहता है। समाज स्वयं संघ है, संगठन है, औपचारिक संबंधों का योग है जिसमें सहयोग देने वाले व्यक्ति एक दूसरे के साथ जुड़े हुऐ या संबद्ध है।[2] इस परिभाषा में समाज के लिये सहयोगी सम्बन्धों को आवश्यक माना गया है, जो व्यक्तियों को एक–दूसरे के साथ जोड़ते हैं। समाज के अन्तर्गत परिवार, विवाह, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थायें, असंख्य समूह, नगर, ग्राम आदि का समावेश होता है। ये सभी समाज की निर्माणक इकाइयाँ है और इन इकाइयों में पाये जाने वाले प्रक्रियात्मक संबंध के आधार पर ही समाज का निर्माण होता है अर्थात समाज का अर्थ मनुष्य द्वारा स्वयं के लिये विकसित उस व्यवस्था से है जो व्यक्ति को एक साथ रहने के लिये प्रेरित करती है।*

समाज के निर्माण में व्यक्ति की स्वयं को अधिक सुरक्षित व व्यवस्थित रखने की मानसिकता भी सामने आती है। कुछ दशकों पहले सामाजिक समस्याओं की संख्या बहुत कम थी, धीरे–धीरे समस्याओं का ग्राफ बढ़ता जा रहा है।

कुछ समाज शास्त्रियों ने सामाजिक समस्याओं को इस प्रकार परिभाषित किया है – ''सामाजिक समस्या व्यवहार का एक ऐसा रूप है जिसे समाज का एक बड़ा भाग व्यापक रूप से स्वी.त एवं अनुमोदित मापदण्डों का उल्लंघन मानता है।''[3]

वर्तमान समाज जटिल हो रहा है और तेजी से बदल रहा है आज व्यक्ति अनेकों समस्याओं से जूझ रहा है। विभिन्न पार्टियों की सरकारें तेजी से बदल रही है। .त संकल्प घोषणाओं के बावजूद हिंसा तेजी से बढ़ रही है। राजनीति का अपराधीकरण हो गया है। सामाजिक और नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। इन समस्याओं के कारण समाज का बड़ा भाग प्रभावित होता है। युवा तनावपूर्ण हैं और आन्दोलनों का मार्ग अपना रहे हैं। अधिकाधिक व्यक्ति मानसिक रोगों का शिकार हो रहे हैं।

इसके अतिरिक्त आज आधुनिकीकरण, नगरीकरण, औद्योगिक विकास ने हमारे जीवन की शैली को बदल दिया है। इन्होनें हमारे जीवन को एक ओर सुविधाजनक और विलासितापूर्ण बनाया है, दूसरी ओर इन्होनें हमारे लिये बहुत सी व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं को भी जन्म दिया है। बदलते हुये परिवेश में, सामाजिक व्यवस्था में, सामाजिक संबंधों के बंधन में कमियाँ और कमजोरियाँ उत्पन्न की हैं अर्थात् सामाजिक संबंधो के बंधन जो हमें एक दूसरे के नजदीक लाते थे वे धीरे–धीरे टूट रहे है। इससे जीवन में अप्रसन्नता बढ़ रही है। लोग एक–दूसरे से अलग हो रहे है। छल–कपटपूर्ण व्यवहार कर रहे है। नकारात्मक संदेश दे रहे हैं। लोग अपने दायित्वों का निर्वाह नहीं कर रहे हैं। प्रश्न यह उठता है कि वह कौन से उपाय हैं जो सामाजिक सम्बन्धों में सुधार ला सकें।

वर्तमान परिवेश में सभ्य समाज का व्यक्ति के लिये शिक्षित व सुसंस्.त होना अति आवश्यक है। इसके लिये कला व साहित्य का ज्ञान अति आवश्यक है। कला शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में हुआ है–

''यथा कलां यथा शफं ऋणं सन्यामसि''[4]

मार्कण्डेय मुनि ने भी ''विष्णु धर्मोत्तर पुराण'' में कला को धर्म, अर्थ तथा मोक्ष का दाता कहा है–

''कलानां प्रवरं चित्रं धर्म कामार्थमोक्षदम्।''
मंगल्यं प्रथमं चैतद्गृहे यत्र प्रतिष्ठितम्।।'[5]

असि0 प्रोफेसर, संगीत एवं गायन विभाग, महिला महाविद्यालय, कानपुर (उ0प्र0) भारत

रस्किन ने भी कहा है कि प्रत्येक महान ''कला''को ईश्वरीय .ति के प्रति मानव के आह्लाद की अभिव्यक्ति कहा जा सकता है अर्थात् ईश्वर की .ति ''सृष्टि'' को देखकर मानव के हृदय में जो आह्लादपूर्ण अनुभूति उत्पन्न होती है कला उसी का परिणाम है।

तात्पर्य यह है कि जब व्यक्ति के मन मस्तिष्क में आनन्द की अनुभूति रहेगी तो वह अन्य व्यक्ति, परिवार या समाज में सकारात्मक व्यवहार करेगा। इस सुव्यवस्थित व्यवहार करने हेतु विभिन्न कलाओं में ''संगीत कला'' को सर्वश्रेष्ठ माना है। भर्तृहरि ने उचित ही कहा है–

'साहित्य संगीत कला विहीनः।
साक्षात् पशु पुच्छविषाणहीनः।।[6]

इस तरह यह विचार संगीत कला की उपयोगिता तथा महत्व को पूर्ण रूप से स्थापित करता है। इसके प्रयोग से संगीत के स रे ग म् प ध नि स्वर केवल अक्षर ही नहीं बल्कि प्रत्येक मनुष्य के मानस, उसके सुव्यक्तित्व व उसके व्यवस्थित विकास में भी सहायक होते है। कला वह प्रतिक्रिया है जो मनुष्य के अनुभवों से उत्पन्न होती है। चाहे यह अनुभव चेतन मन के धरातल से उपजे हों या अवचेतन मन की तहों में कुलबुलायें हों। संवेदनाओं व कल्पनाओं की शुद्धता इसमें भाव व मर्म का आकर्षण करती है तथा प्रस्तुति के समय यही कारक श्रोता, दर्शक या उपभोक्ता के अवचेतन में पड़ी इच्छाओं एवं संवेगो को उत्तेजित करते हैं और वह सम्मोहित हो जाता है।[7]

संगीत के स्वरों से मनुष्य के आचरण में शुद्धता रहती है। संगीत में शरीर की नाड़ियों व इन्द्रियों में प्रभाव डालने वाले व उन्हें जागृत करने वाले कम्पनों के कारण मस्तिष्क अपनी अत्यधिक ऊर्जा उत्पन्न कर पाता है। जो नये विचारों के साथ प्रगतिशील एवं सयंत व्यवहार को जन्म देता है। मनुष्य के जन्म के साथ ही उसके भाव, उसकी भावना व उसकी अभिव्यक्ति भी जन्म लेती है। बाल्यावस्था में ही संगीत की पृष्ठभूमि से संचित लोरी, गीत, पूजा, यज्ञ अथवा इबादत कोई भी लयात्मक ध्वनि उसके विकास के साथ उससे जुड़ती चली जाती है और इसी कारणवश वह अन्जाने में ही संगीत व साधना से जुड़ता चला जाता है। संगीत द्वारा भावनात्मक संबंध व विचारों के साथ–साथ उसके व्यक्तित्व के निर्माण का शुभारम्भ हो जाता है, जो आगे चलकर उसे अन्य लोगों से विशिष्ट एवं सद्व्यवहारिक बनाता है। मनुष्य के दबे हुये विशुद्ध भावों एवं उसकी अपूर्ण इच्छाओं की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति 'संगीत' ही है। संगीत में कुछ रागों के स्वरों द्वारा मनुष्य में मार्मिक संवेदनाओं को जन्म मिलता है। उसके मनस में उपस्थित निराशा व नीरसता के व्यर्थ भावों से उसे मुक्ति मिलती है। जैसे बागेश्री राग मध्यरात्रि में गाया जाने वाला राग है। इस राग के कोमल गान्धार व कोमल निषाद स्वर स्मृति व मार्मिक भावों को जन्म देने में सहायक होते है। इस राग का प्रस्तुतकर्ता व श्रोता दोनों ही एक भावुक मनोविज्ञान से सत्संग करते हैं। इसी प्रकार प्रातः कालीन गाये जाने वाले राग भैरवी के कोमल स्वर आदर, प्रेम, त्याग, विरह व श्रद्धा के भावों को उत्पन्न कर किसी भी मानव के मनस को सम्मोहित करते हैं। प्रातःकाल की भाव विभोर वन्दना तथा ईश्वर से एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य की तरह संबंध बनाने का मनोविज्ञान इन्हीं कोमल स्वरों से उत्पन्न भावों के कारण ही होता है। कभी–कभी रागों के स्वरों की निश्चित प्रक्रिया श्रोता व प्रस्तुतकर्ता को शांत धरातल की ओर ले जाती है और मनुष्य को सद् व्यवहार की ओर प्रेरित करती है। यथा सारंगी, वायलिन, वाद्य करूण रस को, सितार प्रेम, सौहार्द तथा बांसुरी प्र. तिवादी भावना को जन्म देता है, जिससे मनुष्य एक दूसरे के अर्न्तमन से समायोजित होता है।

प्लेटों ने संगीत को सभी विज्ञानों का मूलाध ाार माना है। उनका यह भी मानना है कि ईश्वर द्वारा इसका निर्माण विश्व की वर्तमान विसंवादी प्र.ति के निराकरण के लिये हुआ है। गुरूदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने संगीत के लिये अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये 'आनन्दमय संगीत से मस्ती एवं आत्मविस्मृति को पाकर मैं अपने प्रभू को भी मित्र कह डालता हूँ।'[8] स्पष्ट है कि परिवार समाज व राष्ट्र में मित्रवत व्यवहार हेतु संगीत अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

विशेष परिस्थितियों तथा विशेष स्थान में मनुष्य विशिष्ट व्यवहार प्रदर्शित करता है, जो परिस्थितिवश अनुकूल होता है। इन विभिन्न रसों की निष्पत्ति हेतु नारद ने नारदीय शिक्षा में पाँच श्रुतियों की व्याख्या की है–

दीप्तायताकरूणानां मृदुमध्यमयोस्थता।
श्रुतीनां योऽविशेषज्ञों न स आचार्य उच्चयते।[9]

अर्थात् –

दीप्ता – शौर्य, वीर्य, तेजोद्दीप्त, गम्भीर भाव द्वारा रौद्र रस

आयता – प्रसन्नता, उदारता, आदि भाव द्वारा वीर रस की परिणति

करूणा – करूणता, कोमलता, मर्म, शोक भाव द्वार करूण रस की परिणति।

मृदु – नम्रता, प्रीति, उत्साह भाव द्वारा शान्त रस की परिणति।

मध्या – सयंम, ममता आदि भाव द्वारा अद्भुत रस की परिणति

इन भावों व रसों में संगीत को ही सर्वस्व अभिव्यक्ति का आधार माना है।

संगीत का प्रभाव मानव शरीर के अंगों से होकर मस्तिष्क पर होता है। शरीर में उपलब्ध कर्णेन्द्रिय भाग संगीत का वाहक है। मन में संगीत से उत्पन्न होने वाली समस्त प्रतिक्रियायें तथा नाड़ी तंत्र से लेकर इन्द्रियों तक को शांत व स्थिर रखने का कार्य संगीत द्वारा ही होता है। यही रसपूर्ण माधुर्य मनुष्य के चित्त को स्थिर करता है तथा उसके भीतर के भाव की ओर ले जाता है। भीतर के भाव से अभिप्राय उस विचारतन्त्र से है जो अपनी सोचने व खोजने की प्रवृत्ति के कारण मानव–व्यवहार में परिवर्तन करता है। भारत में संगीत को सदैव ही मानव–विकास का सहायक माना गया है।

'सम्यक् प्रकारेण यद् गीयते तत्संगीतम्''(10)

अर्थात् सम्यक प्रकार से स्वर–ताल, शुद्ध आचरण, हाव–भाव और मुद्रा, आदि सहित गायन (वादन) ही संगीत हैं।

संगीत के बिना अगर संस्कार संस्ति, परिवार तथा समाज की कल्पना अधूरी है तो राष्ट्र किस प्रकार इससे अछूता रह सकता है। किसी भी राष्ट्र के यही चार मूल स्तम्भ हैं। संगीत इन चारों स्तम्भों का धरातल है, जो इन्हें एक दूसरे से जोड़ता है। संगीत द्वारा राष्ट्र में उपस्थित उसकी सबसे छोटी इकाई अर्थात् एक व्यक्ति से लेकर सम्पूर्ण जनमानस को प्रभावित किया जा सकता है। संगीत राष्ट्र के प्रति चिंतन व प्रेम को प्रकट करता है। ऋग्वेद का यह श्लोक मानव के मनोविज्ञान व काव्य द्वारा उसकी भावाभिव्यक्ति को सामने लाता है –

ध्रुवं ते राज वरूणों ध्रुवं देवों बृहस्पतिः।
ध्रुवं ते इन्द्रस्याग्निरयं राष्ट्रं धारयतां ध्रुवं।[11]

संगीत–धर्म, मत, स्तर व स्थिति से ऊपर उठकर सीधे–सीधे जनसाधारण के मनस को राष्ट्र व एकता के प्रति जागरूक करता है। संगीत की लोकप्रियता व स्वीकार्यता, समाज के सभी पक्षों में पाई जाती है।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर यह सिद्ध होता है कि पारिवारिक सभी संबंधों समाज, शिक्षा, राष्ट्र आदि सभी क्षेत्रों में सद्विचार, सद्व्यवहार तथा स्वस्थ वातावरण को स्थापित करने में संगीत अहम् भूमिका निर्वहन करता रहा है तथा इसकी सकारात्मक भूमिका को सभी ने स्वीकारा है तथा भविष्य में भी स्वीकारा जायेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मुगलकाल में भारत की सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की प्रगति एवं विकास का विवेचनात्मक अध्ययन, डॉ0 उमा सक्सेना (शोध ग्रन्थ)।
2. Principles of Sociology, Giddings Pg. 27. संगीत का समाजशास्त्र गिडिंग्स।
3. सामाजिक समस्यायें, डॉ0 रवीन्द्र नाथ मुखर्जी एवं भरत अग्रवाल, पृष्ठ–12
4. ऋग्वेद 8/47/16
5. भारतीय संगीत का इतिहास, जोगिन्दर सिंह बावरा, पृष्ठ–3
6. भर्तृहरि शतक, नीतिशतक, श्लोक–12
7. संगीत एवं मनोविज्ञान, डॉ0 किरन तिवारी, पृष्ठ–91
8. संगीत पत्रिका महाराजा कुम्भ संगीत परिषद, उदयपुर, पृष्ठ–100 (2001–02)
9. नारदीय शिक्षा, नारद, पृष्ठ–172
10. संगीत रत्नाकर, शारंगदेव, पृष्ठ–3/13
11. ऋग्वेद – 10/173/5
12. संगीत का समाजशास्त्र – सत्यवती शर्मा पंचशील प्रकाशन, जयपुर 1995
13. संगीत का योगदान मानव जीवन के विकास में–

14. डॉ0उमा शंकर शर्मा इस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली 2001
15. संगीत की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि – डॉ0 कविता चक्रवर्ती राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर 1990
16. भारतीय संगीत का इतिहास –जोगिन्दर सिंह बावरा ए0बी0एस0 पब्लिकेशन जालन्धर
17. ऋग्वेद –सं0 विश्वबन्धु वी0वी0आर0आई0 होशियारपुर / 1965
18. संगीत रत्नाकर –शारंगदेव सं0 सुब्रमण्यम शास्त्री,
19. अड्यार संस्करण, निधि तथा सुधाकर टीका सहित, 1959
20. संगीत एवं मनोविज्ञान –डॉ0 किरन तिवारी कनिष्क पब्लिशर्स नई दिल्ली, 2008
21. विष्णु पुराण – स0प0 श्री राम शर्मा आचार्य संस्कृति संस्थान, बरेली, प्रथम संस्करण 1967
22. भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण –डॉ0 स्वतन्त्र शर्मा, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली तृतीय सं0–1996
23. भारतीय मनोविज्ञान– डॉ0 रामनाथ शर्मा एवं डॉ0 रचना शर्मा एटलांटिक पब्लिशर्स नई दिल्ली
24. भारतीय संगीत एवं मनोविज्ञान –डॉ0 वसुधा कुलकर्णी राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर–1990
25. सामाजिक समस्याऐं –डॉ0 रवीन्द्रनाथ मुखर्जी डॉ0 भरत अग्रवाल, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2003

*****